दिनांक 25 जुलाई, 2010 को लखनऊ में बाबू जी स्व0 पारसनाथ पाठक 'प्रसून' स्मृति समारोह हेतु महामहिम श्री राज्यपाल का उद्‌बोधन।

——————————

देवियों और सज्जनों,

हिन्दी काव्य के पुरोधा स्वर्गीय पारसनाथ पाठक 'प्रसून' जी की स्मृति में आयोजित इस समारोह में आप सबके बीच आकर मुझे अत्यधिक खुशी हो रही है। आज के इस अवसर पर मैं सबसे पहले बाबू जी स्वर्गीय पारसनाथ पाठक जी को अपने श्रद्धा—सुमन अर्पित करता हूँ।

उत्तर प्रदेश के जनपद जौनपुर में जन्में स्व0 पारसनाथ पाठक 'प्रसून' बाल्यावस्था में ही अपने माता–पिता के स्नेह से वंचित हो गये। हलांकि असमय माँ–बाप की स्नेह छाया से वंचित हो जाना किसी भी बालक के लिये सबसे दुःखद होता है। परन्तु उनके जीवन संघर्ष को देखकर ऐसा लगता है कि वे अपने माता–पिता की अदृश्य स्नेह छाया व आर्शीवाद से इस शिखर पर पहुँचे, जिस पर पहुँचने की कल्पना भी सामान्य परिस्थितियों में नहीं की जा सकती।

बाबूजी का जीवन संघर्ष एक ऐसे व्यक्तित्व के जीवन संघर्ष की कहानी है, जो कभी हार नहीं मानता और शांत भाव से जीवन–पथ

पर ‘एकला’ चलता रहता है। अपने नाम ‘‘पारस’’ के अनुरूप उन्होंने जिस किसी को भी अपनाया, उसे अनोखा बना डाला।

पारसनाथ पाठक जी का बाल्यकाल से ही साहित्य–सृजन की ओर रूझान था और ऐसा प्रतीत होता है कि साठ व सत्तर के दशक में उनका साहित्य सृजन चरमोत्कर्ष पर रहा। प्रसून जी की कविताओं में जहाँ विषय की विविधता है, वही शैली का भी वैविध्य है। उन्हें यह आभास है कि बाल मन भावुक होता है और जैसे–जैसे यह युवा होता है वैसे–वैसे कल्पना की ऊँची उड़ानों से नई सृष्टि का सृजन भी करता है। किन्तु इस भावुकता व कल्पनाशीलता के साथ ही उन्हें सृष्टि के यथार्थ व व्यवहारिक पहलुओं व पक्षों का भी भान है।

क्योंकि जहाँ कल्पना व भावना में मिलन से विरह तक अपनी लेखनी चलाते हैं वहीं वे सामाजिक असामनाता, दुराचरण व शोषण से चिन्तित हैं और उसके विरूद्ध अपनी रचनाओं में मुखर भी होते हैं।

मुझे खुशी है कि स्व0 प्रसून जी की स्मृति में स्थापित ''प्रसून प्रतिष्ठान'' द्वारा हिन्दी काव्य त्रैमासिक ''पारस पखान'' पत्रिका का प्रकाशन किया जा रहा है। इसके साथ ही यह प्रतिष्ठान हिन्दी साहित्य के साथ ही सामाजिक शैक्षिक उन्नयन की दिशा में भी अग्रसर है। प्रतिष्ठान द्वारा प्रति वर्ष दो हिन्दी कवियों को 'पारस शिखर सम्मान' तथा 'स्वर बेला युवा सम्मान' भी दिया जाता है। इस वर्ष यह सम्मान पद्मभूषण श्री गोपाल दास नीरज तथा श्री शशिकान्त

शशि को दिया जा रहा है। मैं इन दोनो महान साहित्यकारों को इस सम्मान के लिये अपनी हार्दिक बधाई देता हूँ।

आज यहाँ 'पारस शिखर सम्मान' से सम्मानित श्री गोपाल दास नीरज जी किसी परिचय के मोहताज नहीं हैं। नीरज जी काव्यात्मक व्यक्तित्व के धनी पुरूष हैं। इन्होंने मर्मस्पर्शी काव्य–अनुभूति तथा सहज सरल भाषा द्वारा हिन्दी कविता को एक नई दिशा दी है। मैं तो अपने विद्यार्थी जीवन से इनके गीतों का प्रशंसक रहा हूँ। दिल्ली में एक साहित्य सभा में मैंने इनसे इनके एक गीत– ''इस तरह कगार धार पार पर, इस तरह मरण जीवन के मंच पर– एक पांव

चल रहा अलग थलग और दूसरा किसी के साथ है''–– गीत को पुनः गुनगुनाने का आग्रह तक कर डाला था।

मैं इस अवसर पर मध्य प्रदेश के देवास जिले से पधारे युवा कवि श्री शशिकान्त शशि जी का स्वागत करता हूँ तथा पुनः उन्हें 'स्वर बेला युवा सम्मान' मिलने पर बधाई देता हूँ। श्री शशिकान्त जी युवा पीढ़ी के ओजस्वी कविताओं के प्रतिनिधि कवि हैं। वे कई सामाजिक संस्थाओं से भी जुडे हैं तथा युवा पीढ़ी में काव्य का प्रमुख स्वर माने जाते हैं। वे देशभर में अनेक जाने–माने कवि सम्मेलनों में अपनी उपस्थिति दर्ज करा चुके हैं तथा पूर्व में कई सम्मान भी प्राप्त कर चुके हैं। श्री शशिकान्त जी सृजनारत रहें, ऐसी मेरी कामना हैं।

मैं इतना जरूर कहना चाहूंगा कि युवा कवियों को अपनी कविताओं के माध्यम से देशवासियों में प्रेम, एकता, शांति, सद्भाव और मानवता की भावना जागृत करने का प्रयास करते रहना चाहिये।

मेरे विचार में साहित्य को मनुष्य की दृष्टि से देखा जाना चाहिए। जो साहित्य मनुष्य के हृदय की संवेदनाओं को नहीं छू जाता वह जीवन प्रवाह को कभी बदल भी नहीं पाता। वही साहित्य जन साहित्य बन सकता है जो मनुष्य को जाति, धर्म व सम्प्रदाय की संकीर्णता से ऊँचा उठाकर उसमें नई चेतना दे सके, उसमें आत्म बल का संचार करे ऐसा साहित्य ही समाज की अक्षय निधि है।

भाषा मनुष्य के भावों की अभिव्यक्ति का एक माध्यम है। अंततः भावों की गहराई एवं मानवीय संवेदनायें ही साहित्य सृजन का मूल आधार बन कर पाठक की संवेदनाओं से जुड़ती है। आदिकवि वाल्मीकि के हृदय में एक क्रोंच पक्षियों के रति–रत जोड़े के वध से व्यथा की जो संवेदना धार बही, वही प्रथम कविता बनी, जो आज भी उतनी ही प्रभावी है। हिन्दी में आदिकवि के इसी भाव पर किसी रचनाकार ने भाव प्रकट किये–

वियोगी होगा पहला कवि, विरह से उपजा होगा गान,
उमड़कर आंखों से चुपचाप बही होगी कविता अनजान।

आज साहित्य सृजन में स्थाई–भाव नजर नहीं आता है। साहित्य के भावों में शाश्वतता होनी चाहिए। सूर हों–तुलसी हों–केशव हो, सेनापति हो या बिहारी हों– इनके साहित्य में स्थायित्व था। उनकी रचनायें कालजयी थी और आज भी हृदय को उतनी ही छूती हैं।

अपने माँ–बाप की स्मृति को संजोकर देखना हमारी संस्कृति एवं परम्परा में शामिल है। यह इस सन्दर्भ में कह रहा हूँ कि वृद्धा आश्रमों में ऐसे न जाने कितने बुजुर्ग हैं, जिनके बच्चे अच्छी हालत में हैं मगर माँ–बाप के लिये उनके पास न समय है न जगह। जिन माँ–बाप ने उँगली पकड़कर चलना सिखाया हो और बच्चे बड़े होकर

उन्हें सहारा, प्यार और सम्मान नहीं दे रहे। यह बहुत चिन्ता का विषय है। सोच कर ही बहुत दुःख होता है।

मैं यह जानकर अभिभूत हूँ कि डा0 अनिल पाठक, जो कि लखनऊ में अतिरिक्त जिलाधिकारी हैं व उनके परिवारजन अपने स्वर्गीय पिता की स्मृति को जीवन्त बनाये रखने के लिये इस तरह का आयोजन हर साल करते हैं।

मैं एक बार पुनः यहाँ सम्मानित दोनों विभूतियों को बधाई देता हूँ। मुझे यहाँ आपसे मिलने का अवसर प्रदान करने के लिए आयोजकों का आभार व्यक्त करता हूँ।

धन्यवाद। नमस्कार।